THE TIMES OF INDIA

*Date:16-05-22*

# Who Is Reforming ?

***No political party is. And millions will not be economically empowered as a result***

**TOI Editorials**

Congress's chintan shivir's push for a policy "reset" after 30 years of liberalisation is part of a worrying trend of political parties refusing to step on the pedal and speed up the next set of urgently needed economic reforms. Every party takes credit for economic growth and resultant job creation and systemic improvements post-1991, a set of changes that have so far pulled millions out of poverty. But initial reforms have lost their impact and India needs greater liberalisation. Instead, political discourse is largely on welfarism, freebies and caste politics in the name of social justice.

Economic inequality is certainly a big problem but a focus only on redistribution will merely subdivide the existing pie. What parties are talking today won't improve productivity, foster competitive markets or generate new jobs. And these 'progressive' policies may even take pernicious turns: Indira Gandhi's desi-socialistic "Garibi Hatao" slogan facilitated protectionism and rent-seeking, not poverty alleviation. Even BJP, today enjoying the kind of political dominance Congress had three decades ago, is a hesitant reformer. It lost its mojo after Rahul Gandhi's "suit boot ki sarkar" jibe on key land acquisition amendments. And it lost it again after anti-farm reform protests by a vocal minority of farmers.

The perception that economic reforms are deeply unpopular stems from this fear of vested interests. But as every country has seen, being scared of small, vocal groups means a vast majority is denied better prospects. The current political timidity also extends to whetting voter appetite for bad policies like freebies. And these spends actually hurt citizens when cash-strapped exchequers cut corners in expenditure for schools, hospitals and other public works that improve human capital. Take Rajasthan's return to defined pension benefit for government employees, setting off copycats in other states. Recall that states overcame the resistance to contributory pensions after defined benefits began proving unviable. No less self-injurious are domicile and caste quotas in the private sector.

The political consensus that allowed GST to come into being is needed again. All-party deliberations to ensure states, in tandem with GoI, pursue reforms in land, labour and agriculture laws are crucial. Without reformed land and labour markets, manufacturing will remain stuck in a few PLI projects. It won't power a consistent 8% growth, which India needs for about 10 years if it is to come close to the China miracle. It's doable if the backslide into populism is arrested right now.

---

बिज़नेस स्टैंडर्ड

**Date:16-05-22**

# विश्वसनीयता को क्षति

**संपादकीय**

केंद्र सरकार के विदेश व्यापार महानिदेशालय (डीजीएफटी) ने शुक्रवार को एक गजट अधिसूचना के जरिये भारत से होने वाले गेहूं निर्यात को तत्काल प्रभाव से रोक दिया। डीजीएफटी ने इस निर्णय के लिए प्रमुख वजह यह बताई कि देश की समग्र खाद्य सुरक्षा का प्रबंधन किया जाना है तथा पड़ोसी एवं अन्य संकटग्रस्त देशों की मदद करनी है। यह निर्णय उस समय लिया गया है जब उत्तर भारत में तापमान असामान्य रूप से बढ़ा हुआ है जिसकी वजह से फसल प्रभावित हुई है। कुछ इलाकों में तो उपज के आधी हो जाने का भी अनुमान है। इस बीच यूक्रेन पर रूस के आक्रमण के कारण भी दुनिया भर में गेहूं की कीमतें बढ़ी हैं क्योंकि यूक्रेन गेहूं का बहुत बड़ा उत्पादक और निर्यातक है। वैश्विक बाजारों में गेहूं कीमतों में इस वर्ष अब तक 40 प्रतिशत से अधिक का इजाफा हुआ है।

उपभोक्ता मूल्य सूचकांक की दर अप्रैल में बढ़कर सालाना आधार पर 7.8 फीसदी हो गई। इसमें खाद्य कीमतों का अहम योगदान रहा। यह भी संभव है कि आठ वर्षों के इस उच्चतम रुझान ने डीजीएफटी के निर्णय को प्रभावित किया हो। सरकार ने महामारी के दौरान खाद्यान्न वितरण भी बढ़ाया था। चूंकि वैश्विक कीमतें न्यूनतम समर्थन मूल्य से अधिक थीं इसलिए किसानों ने भी अपना अनाज निर्यातकों को बेचना बेहतर समझा। यही कारण है कि सरकार 195 लाख टन के संशोधित खरीद लक्ष्य को हासिल करने में भी संघर्ष कर रही है। यह लक्ष्य जनवरी के अनुमान से 50 फीसदी कम है। बहरहाल, भारत के पास खाद्यान्न का पर्याप्त भंडार है और सरकार ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली में चावल का आवंटन बढ़ाकर बेहतर किया है। गेहूं और चावल का संयुक्त भंडार मई 2020 के स्तर के करीब है।

इन बातों के बावजूद यह निर्णय न केवल खराब आर्थिकी का नतीजा है बल्कि यह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाएगा। प्रधानमंत्री ने हाल ही में स्वयं दुनिया को आश्वस्त किया था कि भारतीय गेहूं संकट के समय मददगार साबित होगा। डीजीएफटी ने प्रधानमंत्री के किए वादे को ही नकार दिया है। भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा गेहूं उत्पादक है लेकिन निर्यात के क्षेत्र में यह यूक्रेन, अर्जेन्टीना, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, यूरोपीय संघ और रूस जैसे कई देशों से पीछे है। अमेरिकी कृषि विभाग ने अनुमान जताया है कि 2022-23 के दौरान भारत का गेहूं निर्यात एक करोड़ टन से कम रहा जबकि रूसी फेडरेशन का निर्यात 4 करोड़ टन और कनाडा तथा ऑस्ट्रेलिया का संयुक्त निर्यात 5 करोड़ टन से अधिक रहा।

बहरहाल, भारत के कमजोर गेहूं निर्यातक होने के बावजूद निर्यात पर प्रतिबंध वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर गहरा असर डालेगा। अधिसूचना में यह कह कर कुछ आशंकाओं को दूर करने का प्रयास किया गया है कि यह प्रतिबंध पूरी तरह लागू नहीं है अभी भी लेटर ऑफ क्रेडिट के आधार पर निर्यात किया जाएगा तथा उन देशों को निर्यात जारी रहेगा जिनकी खाद्य सुरक्षा संबंधी जरूरतों के चलते उनकी सरकारें अनुरोध करेंगी। निर्यात प्रतिबंध खेती की आय को प्रभावित करेगा। जब कीमतें कम होती हैं तो निर्यात की इजाजत होती है लेकिन जब कीमतें अधिक होती हैं तो निर्यात पर प्रतिबंध लग जाता है। इससे दीर्घावधि में आय प्रभावित होती है। गेहूं की दिक्कत से निपटने के लिए सरकार को न्यूनतम समर्थन

मूल्य पर अस्थायी अधिभार जैसी व्यवस्था करनी चाहिए। बाजार आधारित उपाय भी मौजूद हैं जिनकी मदद से देश में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है। परंतु दुख की बात है कि सरकार ने सबसे बुरा उपाय अपनाया।

---

जनसत्ता

***Date:16-05-22***

# लापरवाही की आग

**संपादकीय**

दिल्ली के मुंडका इलाके में बीते शुक्रवार को हुए भयानक अग्निकांड ने एक बार फिर आग से बचाव के इंतजामों की पोल खोल दी है। इससे यह भी साफ हो गया है कि पिछले कुछ वर्षों में हुए ऐसे तमाम हादसों के बाद भी हमारी आंखें खुली नहीं हैं। अग्नि सुरक्षा को लेकर आज भी हद दर्जे की लापरवाही जारी है, लोगों के स्तर पर भी और सरकार के स्तर पर भी। इसी का नतीजा समय-समय पर ऐसे बड़ी घटनाओं के रूप में सामने आता रहा है। मुंडका में हुए अग्निकांड के कारण जो भी रहे हों, इतना तो साफ है कि अगर इमारत में बचाव के इंतजाम होते तो लोगों की जान न जाती। जैसा कि जांच में पता चला है इमारत में प्रवेश करने और बाहर निकलने के लिए सिर्फ एक ही रास्ता बनाया गया था, वह भी बेहद छोटा और संकरा। इसलिए आग लगने पर लोग बाहर नहीं निकल पाए। कई लोग तो कूद कर जान बचाने की कोशिश में जख्मी हो गए। जो नहीं निकल पाए वे आग की लपटों और धुएं में घुट कर मर गए। गौरतलब है कि यह हादसा जिस चार मंजिला इमारत में हुआ, उसमें सीसीटीवी और राउटर बनाने की कंपनी चल रही थी। यहीं इन उत्पादों के निर्माण और इनकी पैकिंग का काम भी होता था। इमारत की एक मंजिल पर ही इसका गोदाम भी था। बताया गया है कि घटना के वक्त सौ से ज्यादा लोग कंपनी की एक बैठक में शामिल होने आए थे।

इस अग्निकांड ने एक बार फिर उन्हीं सवालों को सामने ला दिया है जो ऐसे हर बड़े हादसे के बाद उठते रहे हैं। लेकिन विडंबना यह है कि पिछले हादसों से किसी ने कोई सबक नहीं सीखा। वरना बार-बार ऐसे हादसे क्यों होते हैं? याद किया जाना चाहिए कि ढाई साल पहले दिसंबर 2019 में दिल्ली की एक अनाज मंडी में आग से तैंतालीस लोगों की मौत हो गई थी। सवा तीन साल पहले करोल बाग के एक होटल में आग ने सत्रह लोगों को लील लिया था। शायद ही कोई साल

गुजरता हो जब ऐसे दहला देने वाले बड़े अग्निकांड न हो जाते हों। जांच हर घटना की होती है। रिर्पोटें भी आती हैं, पर उसके बाद सब कुछ पुराने ढर्रे पर लौट आता है। इससे तो यही लगता है कि ऐसे हादसों के कारणों को लेकर जो सवाल खड़े होते हैं, उनका जवाब और समाधान खोजने के बजाय सरकार उन्हें फाइलों में दफन कर देना बेहतर समझती है। वरना कैसे एक चार मंजिला इमारत जो लालडोरा के दायरे में आती है, उसे व्यावसायिक काम के लिए इस्तेमाल किया जाता रहा, वहां सामान बनता रहा, गोदाम भी था, लेकिन आग से बचाव के कोई साधन नहीं थे? इस इमारत के मालिक और कंपनी के संचालक के पास अग्निशमन विभाग की एनओसी भी नहीं थी।

आग की घटनाओं को लेकर दिल्ली की हालत बेहद चिंताजनक है। महानगर में बेहद घनी आबादी वाले इलाके हैं। बिजली के तारों के लटकते गुच्छे तो आम बात हैं। रिहायशी इलाकों में ही बड़ी संख्या में ऐसी इमारते हैं जहां किसी न किसी प्रकार के उद्योग और दफ्तर चल रहे हैं। गर्मी के मौसम में एअरकंडीशनर भी अपेक्षाकृत ज्यादा चलते हैं। जनरेटरों का भी उपयोग होता है। ऐसे में जरूरी है कि बिजली से होने वाले हादसों को रोकने के पर्याप्त बंदोबस्त हों। ऐसे हादसों से बचना है तो लोगों के साथ सरकार को भी यह सुनिश्चित करना होगा कि हर इमारत का सुरक्षा आडिट हो। अगर अग्निशमन विभाग के अनापत्ति प्रमाणपत्र के बिना कहीं कोई गतिविधि चलती है और इसकी वजह से जानमाल का नुकसान होता है तो इसका पहला दोषी तो वही है जिस पर इसकी सुरक्षा सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी है।

---

***Date:16-05-22***

# विनिर्माण केंद्र बनने की चुनौती

**जयंतीलाल भंडारी**

विनिर्माण क्षेत्र को लेकर आई रिपोर्टों में कहा गया है कि अगर भारत को इस क्षेत्र में दुनिया का बड़ा केंद्र बनना है तो इसके लिए मौजूद चुनौतियों का रणनीतिक समाधान निकालने पर जोर देना होगा। इसके लिए पांच रणनीतियों की जरूरत बताई गई है। पहली, देश में मेक इन इंडिया, आत्मनिर्भर भारत अभियान और उत्पादन से संबद्ध प्रोत्साहन (पीएलआइ) योजना को तेजी से बढ़ावा देना। दूसरी, चीन से छिटके उद्योगों, कंपनियों और पूंजी को भारत में लाना। तीसरी, भारत की अर्थव्यवस्था को निर्यात आधारित बनाने की कोशिशों पर जोर। चौथी, भारत के मुक्त व्यापार समझौतों (एफटीए) और क्वाड सुरक्षा संवाद को सफल बना कर उद्योग-कारोबार को तेजी से बढ़ाना और पांचवा यह कि कौशल विकास एवं स्किल इंडिया को कामयाब बना कर श्रम की गुणवत्ता और नई कार्य संस्कृति को उत्पादन का अभिन्न अंग बनाना।

उल्लेखनीय है कि इस समय दुनियाभर में भारत में बने उत्पादों की मांग बढ़ रही है। आत्मनिर्भर भारत अभियान में विनिर्माण के तहत चौबीस क्षेत्रों को प्राथमिकता के साथ तेजी से बढ़ाया जा रहा है। चूंकि अभी भी देश में दवा, मोबाइल, चिकित्सा उपकरण, वाहन और बिजली उपकरण उद्योग जैसे कई अन्य उद्योग चीन से आयातित कच्चे माल पर निर्भर हैं। ऐसे में चीन के कच्चे माल का विकल्प तैयार करने के लिए पिछले डेढ़ साल में सरकार ने उत्पादन से जुड़ी प्रोत्साहन (पीएलआइ) योजना के तहत तेरह उद्योगों को करीब दो लाख करोड़ रुपए आवंटन के साथ प्रोत्साहन सुनिश्चित किए हैं।

अब देश के कुछ उत्पादक चीन के कच्चे माल का विकल्प बनाने में सफल हो रहे हैं। पीएलआइ योजना से अगले पांच वर्षों में देश में पांच सौ बीस अरब डालर यानी लगभग चालीस लाख करोड़ रुपए मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन होगा।

चूंकि देश के कुल आयात में रक्षा सामान और उपकरणों के आयात पर भारी खर्च होता है। इसलिए देश में रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता और निर्यात को बढ़ाने के लिए तेजी से काम चल रहा है। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि रक्षा मंत्रालय ने 21 अगस्त, 2020 से लेकर सात अप्रैल 2022 तक स्थानीय स्तर पर बनाए जाने वाले तीन सौ दस प्रमुख रक्षा उपकरणों की सूची जारी की है। इसके अलावा, कोरोना की चुनौतियों के बाद भारत का दवा उद्योग उत्पादन बढ़ा कर दुनिया के दो सौ से ज्यादा देशों को दवाइयां निर्यात कर रहा है। ऐसे में भारत को दुनिया के नए और बड़े दवा उत्पादन केंद्र के रूप में भी देखा जा रहा है।

यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि कोविड-19 को लेकर चीन के प्रति बढ़ी वैश्विक नाराजगी के कारण तमाम विदेशी कंपनियों ने चीन से अपना कारोबार समेटा लिया था। इधर, पिछले कुछ महीनों से चीन में फिर से कोरोना के मामले बढ़ने से कई औद्योगिक शहरों में उत्पादन ठप पड़ गया है। चीन की यह आपदा भारत के लिए बड़े अवसर के रूप में सामने आई है। चीन से बाहर निकलते विनिर्माण, निवेश और निर्यात के मौके भारत की ओर आने लगे हैं। निसंदेह मार्च 2020 में शुरू किए आत्मनिर्भर भारत अभियान के बाद देश के उद्योगों को तेजी से बढ़ाने का मौका मिला है। ऐसे में यह माना जा रहा है कि भारत विनिर्माण में चीन को पछाड़ सकता है। भारत में दुनिया में सर्वश्रेष्ठ गुणवत्ता वाले कम लागत के उत्पाद बनाए जा सकेंगे और विनिर्माण उद्योग जितनी अधिक बिक्री करेंगे, उससे अर्थव्यवस्था में उतने ही अधिक रोजगार सृजित होंगे।

भारत की निर्यात आधारित अर्थव्यवस्था देश को विनिर्माण केंद्र बनाने में प्रभावी भूमिका निभा रही है। कोविड-19 और यूक्रेन संकट की चुनौतियों के बीच पिछले वित्त वर्ष 2021-22 में भारत का उत्पाद निर्यात 419.65 अरब डालर और सेवा निर्यात 249.24 अरब डालर के ऐतिहासिक स्तर पर पहुंचना इस बात का संकेत है कि अब भारत निर्यात आधारित अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ता जा रहा है। जैसे-जैसे भारत के निर्यात बढ़ रहे हैं, विनिर्माण क्षेत्र को भी तरक्की के मौके मिल रहे हैं।

यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि अमेरिका, भारत, जापान और आस्ट्रेलिया का चौगुटा यानी क्वाड भी भारत के उद्योग-कारोबार के विकास में मील का पत्थर साबित हो सकता है। इससे भी भारत को विनिर्माण केंद्र बनाने का बड़ा आधार मिलेगा। इसके साथ-साथ उद्योग कारोबार के विस्तार के लिए भारत जिस त्रिआयामी रणनीति पर चल रहा है, उससे भी विनिर्माण का प्रमुख केंद्र बनने की संभावनाएं प्रबल होंगी। ये तीन महत्त्वपूर्ण आयाम हैं- चीन के प्रभुत्व वाले व्यापार समझौतों से अलग रहते हुए नार्डिक देशों जैसे संगठनों के व्यापार समझौते का सहभागी बनना, पाकिस्तान को किनारे करते हुए क्षेत्रीय देशों के संगठन बिम्सटेक (बे आफ बंगाल इनीशिएटिव फार मल्टी सेक्टोरल टेक्नोलाजिकल एंड इकोनामिक कोआपरेशन) को प्रभावी बनाना और मुक्त व्यापार समझौतों (एफटीए) की दिशा में बढ़ना। भारत ने संयुक्त अरब अमीरात और आस्ट्रेलिया के साथ एफटीए को मूर्तरूप दे दिया है। अब यूरोपीय संघ, ब्रिटेन, कनाडा, खाड़ी सहयोग परिषद (जीसीसी) के छह देशों, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका और इजराइल के साथ एफटीए के लिए प्रगतिपूर्ण वार्ताएं अच्छे भविष्य के संकेत दे रही हैं।

इसमें कोई दो राय नहीं कि वर्ष 2022-23 के केंद्रीय बजट के तहत अब विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) की नई अवधारणा और नए निर्यात प्रोत्साहनों से देश को विनिर्माण का प्रमुख केंद्र बनाने के प्रयासों को गतिशीलता मिली है। सेज का मूल लक्ष्य निर्यात को बढ़ावा देना रहा है, लेकिन सेज इसमें लक्ष्य के अनुरूप योगदान नहीं दे पाए। ऐसे में इसी वर्ष 2022 से सेज की नई अवधारणा के तहत सरकार ने उत्पादकों और निर्यातकों को विशेष सुविधाएं देने की बात कही है। सेज में खाली जमीन का इस्तेमाल घरेलू व निर्यात विनिर्माण के लिए हो सकेगा। सेज में पूर्णकालिक पोर्टल के माध्यम से सीमा और उत्पाद शुल्क मंजूरी की सुविधा होगी। उत्पादन शुरू करने के लिए जरूरी हर तरह की मंजूरी भी वहीं मिलेंगी। इस प्रक्रिया में राज्यों को भी शामिल किया जाएगा। ढांचागत खासकर आपूर्ति शृंखला से जुड़ी सुविधाएं बढ़ने से उत्पादन लागत कम होगी और भारतीय वस्तुएं अंतरराष्ट्रीय बाजार में आसानी से मुकाबला कर सकेंगी। रेल, सड़क, बंदरगाह जैसी सुविधाओं के नेटवर्क से भारतीय लागत वैश्विक स्तर की हो जाएगी। सेज के तहत निवेश को आकर्षित करने के मकसद से लाए गए 'प्लग एंड प्ले माडल' के तहत नए उपक्रमों की स्थापनाओं को भी प्रोत्साहित किया जाएगा। प्लग एंड प्ले व्यवस्था के तहत उद्योगों को बिजली, पानी और सड़क जैसी बुनियादी सुविधाएं मिलेंगी और उद्योग सीधे उत्पादन शुरू कर सकेंगे।

यह भी उल्लेखनीय है कि देश को विनिर्माण का वैश्विक केंद्र बनाने के लिए वित्त वर्ष 2022-23 के बजट में जो प्रावधान सुनिश्चित किए गए हैं, उनका सफलता पूर्वक और जल्द ही क्रियान्वयन जरूरी है। यह भी जरूरी है कि देश में डिजिटल कौशल विकास और स्किल इंडिया से संबंधित विभिन्न योजनाओं पर तेजी से काम हो। विनिर्माण क्षेत्र का वैश्विक केंद्र बनने की संभावनाओं को साकार करने के लिए जरूरी है कि आत्मनिर्भर भारत अभियान और मेक इन इंडिया को सफल बनाने पर जोर दिया जाए। इसके अलावा उत्पाद लागत घटाने, स्वदेशी उत्पादों की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए शोध एवं नवाचार पर ध्यान देने, कानूनों को और सरल बनाने, अर्थव्यवस्था के डिजिटलीकरण की रफ्तार तेज करने, आपूर्ति श्रृंखला की लागत कम करने और श्रमशक्ति को डिजिटल कौशल योग्यता से युक्त करने की भी जरूरत है।

---

राष्ट्रीय सहारा

***Date:16-05-22***

# गेहूं पर जागी सरकार

संपादकीय

भारत ने घरेलू स्तर पर बढ़ती कीमतों को नियंत्रित करने के उपाय के तौर पर गेहूं के निर्यात पर तत्काल प्रभाव से प्रतिबंध लगा दिया है। अलबत्ता, विदेश व्यापार महानिदेशालय ने अधिसूचना जारी करके स्पष्ट किया है कि सरकार किसी दूसरे देश की खास जरूरत के मद्देनजर गेहूं निर्यात की अनुमति दे सकती है। वह गेहूं भी निर्यात किया जा सकेगा जिसके लिए लेटर ऑफ क्रेडिट जारी किए जा चुके हैं, और जो शिपमेंट के लिए तैयार है। बीते सप्ताह जारी आधिकारिक आंकड़ों से पता चलता है कि ईंधन और खाद्य पदाथरे की ऊंची कीमतों के कारण अप्रैल में खुदरा मुद्रास्फीति आठ साल के उच्च स्तर पर पहुंच गई है। गेहूं की कीमतों का यह हाल है कि बीते कुछ महीनों से दाम में तेजी का सिलसिला बना हुआ है। खुदरा में आटे की कीमतें तेजी से बढ़ी हैं, और अभी प्रति किलो आटा 35 रुपये पर बिक रहा है। ऐसे में जरूरी हो गया कि गेहूं जैसे बुनियादी खाद्यान्न की कीमतों को बेकाबू होने से रोका जाए। गेहूं के दाम बढ़ने के मोटामोटी दो कारण गिनाए जा सकते हैं। पहला, इस बार गेहूं का उत्पादन घटने का अनुमान है। बढ़ती गर्मी से गेहूं की फसल नष्ट होने की खबरों के बीच आकलन लगाया गया है कि इस बार अनुमानित गेहूं उत्पादन 11.13 करोड़ टन के बरक्स 10.50 करोड़ टन रह सकतां है। गौरतलब है कि देश में गेहूं की सालाना मांग 10 करोड़ टन के आसपास रहती है। सो, गेहूं का स्टॉक पर्याप्त बनाए रखने के लिए गेहूं का निर्यात रोका गया है। दूसरा कारण, रूस-यूक्रेन युद्ध के चलते गेहूं की वैश्विक मांग बढ़ी है, और बीते चार महीनों के दौरान भारत अभी तक 9.63 लाख टन का निर्यात कर चुका है। रूस और यूक्रेन विश्व में प्रमुख गेहूं निर्यातक देश हैं, लेकिन दोनों के बीच युद्ध के चलते वैश्विक परिदृश्य गेहूं के अभाव का बनता जा रहा है। दोनों देशों का युद्ध लंबा खिंचा तो यकीनन तमाम देशों में गेहूं की कमी पड़ सकती है। भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा गेहूं उत्पादक है, लेकिन इस साल अधिक गर्मी से गेहूं उत्पादन कम उतरने से मांग-पूर्ति में असंतुलन का अंदेशा है। दिक्कत यह भी है कि इस बार व्यापारियों ने न्यूनतम समर्थन मूल्य से ज्यादा दाम देकर किसानों से गेहूं खरीद लिया है। सरकारी खरीद कम रहने और खाद्यान्न का ज्यादा भंडार निजी हाथों में होने से सरकार को ऐसे उपाय करने होंगे कि देश में गेहूं की जरूरत आसानी से पूरी हो सके। इसी कड़ी में गेहूं का निर्यात रोकने का फैसला किया गया है, जो माकूल है।

---

***Date:16-05-22***

# नाटो होगा मजबूत

**संपादकीय**

जिस खतरे की आशंका के चलते रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन ने दुनिया को ऐसे युद्ध की भूलभुलैया में धकेल दिया जिससे बाहर निकलने की राह उन्हें ही मिल नहीं रही है और युद्ध एक एक करके दुनिया भर के देशों को वित्तीय संकट में डुबाता जा रहा है वही खतरा पुतिन के दरवाजे पर दस्तक दे रहा है। दशकों तक तटस्थ रहे फिनलैंड और स्वीडन ने नाटो से उन्हें तुरंत अपना सदस्य बनाने का निवेदन करने का फैसला किया है। कुल 12 सदस्यों के साथ शुरू हुआ सैन्य गठबंधन नाटो अभी 30 सदस्यों वाला बेहद मजबूत संगठन है। कहां तो रूस यूक्रेन को नाटो का सदस्य बनने से रोकने के लिए जी जान से युद्ध लड़ रहा है और कहां नाटो को बैठे बिठाए दो और साथी मिलने वाले हैं। रूस के साथ 1300 किमी. लंबी सीमा बांटने वाले फिनलैंड के यूक्रेन पर रूस के हमले के बाद से ही नाटो के साथ जुड़ने की संभावना के संकेत मिल रहे थे। फिनलैंड में एक हालिया सर्वे में देश के 76 फीसदी लोग इस कदम के पक्ष में थे। नॉर्डिक देशों में डेनमार्क, नॉर्वे और आइसलैंड 1949 में नाटो के गठन के समय से ही इसके सदस्य हैं। फिनलैंड और स्वीडन इसमें शामिल नहीं हुए थे लेकिन अब ये दोनों भी नाटो में शामिल हो सकते हैं। नाटो शीत युद्ध के दौर में पश्चिमी देशों को सोवियत आक्रमण से बचाने के लिए बनाया गया था। हालांकि समय के साथ इसका प्रभाव कम हो रहा था लेकिन यूक्रेन युद्ध ने अचानक इसे मुख्यधारा में वापस ला दिया है। 1999 में पहली बार पूर्व कम्युनिस्ट देशों चेक रिपब्लिक, हंगरी और पोलैंड ने भी नाटो की सदस्यता ली। 9/11 हमले के बाद नाटो देशों ने 'एक के लिए सब और सबके लिए एक' शपथ ली। 2004 में बुल्गारिया, रोमानिया, स्लोवाकिया और स्लोवेनिया भी इसमें शामिल हो गए। उसी साल तीन पूर्व सोवियत देशों एस्तोनिया, लातविया और लिथुआनिया ने नाटो का हाथ थामा। 2010 में अल्बानिया और क्रोएशिया और 2017 में मोंटनेग्रो भी नाटो के सदस्य बन गए। नाटो और रूस के बीच रिश्तों को सबसे ज्यादा चोट तब पहुंची जब रूस ने क्रीमिया को अपने साथ मिला लिया और पूर्वी यूक्रेन में अलगाववादियों को समर्थन दिया। यूक्रेन युद्ध के अत्यंत लंबा खिंच जाने से कमजोर पड़ रहे रूस की दिक्कतें नाटो की मजबूती से और बढ़ेंगी।